International Journal of Arts & Education Research

डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

डा०सुरक्षा बंसल
एसोसिएट प्रोफेसर
शिक्षा विभाग
गाँधी इन्स्टीट्यूट ऑफ प्रोफेशनल
एण्ड टैक्नीकल स्टडीज
मेरठ।

विक्की
शोधार्थी
शिक्षा विभाग
सी०एम०जे० विश्वविद्यालय
राय भोई, जोरबाट
मेघालय।

सारांश-
डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन आधुनिक युग प्रवर्तक के रूप में भारतीय जनमानस के प्रेरणास्रोत रहे हैं। दार्शनिक, शिक्षाशास्त्री एवं कुशल प्रशासक के रूप में उन्होंने राष्ट्रीय ही नहीं अपितु अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति अर्जित की। उन्होंने शिक्षा एवं दर्शन को नयी दिशा प्रदान करते हुए शिक्षा को समाजोन्मुख एवं राष्ट्रोन्मुख बनाने के साथ-साथ भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति को उन्नत शिखर पर ले जाने का सफल प्रयास किया ।

भारत के प्रथम उपराष्ट्रपति एवं द्वितीय राष्ट्रपति, अद्वितीय शब्द शिल्पी, प्रवाहशील वक्ता एवं महान दार्शनिक चिंतक डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन का जन्म 5 सितम्बर, सन् 1888 ई० को तमिलनाडु राज्य के तिरूतनी ग्राम में हुआ था। यह बाल्यावस्था से ही प्रतिभा सम्पन्न एवं गुणी बालक थे। अपने ग्राम में प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त आप चार वर्ष तक लूथरनमिशन हाईस्कूल में शिक्षा प्राप्त करते रहे। बारह वर्ष की आयु में वैलोर के वूहिंस कालेज में भर्ती हुए और चार वर्ष बाद मद्रास क्रिश्चियन कालेज में शिक्षा प्राप्त करने गए और बी०ए० की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। आपने एम०ए० की परीक्षा के लिए 1908 में वेदांत पर प्रबन्ध लिखा। यह दर्शन शास्त्र का उच्च कोटि का प्रबन्ध था जिसकी सराहना की गयी।

अपना जीवन डा० राधाकृष्णन ने शिक्षक के रूप में प्रारम्भ किया। सर्वप्रथम, आप प्रेसीडेंसी कालेज, मद्रास में दर्शनशास्त्र विभाग के अध्यक्ष और बाद में मैसूर में प्रोफेसर नियुक्त हुए। यहाँ आपने दो ग्रन्थों की रचना की जिनके कारण दर्शनशास्त्र के क्षेत्र में आपको बड़ी ख्याति मिली। इन पुस्तकों का नाम है- 'दि फिलासफी ऑफ रवीन्द्रनाथ टैगोर और दि रेन ऑव रिलीजन इन कन्टेम्पोरेरी फिलासफी। प्रथम पुस्तक वर्ष 1918 में और द्वितीय वर्ष 1920 में लिखी गयी।

डा० राधाकृष्णन ने जीवन पर्यन्त दर्शनशास्त्र के क्षेत्र में बड़ा काम किया। सर आशुतोष मुकर्जी ने आपको 1921 में किंग जार्ज प्रोफेसर ऑव फिलासफी के पद पर कलकत्ता विश्वविद्यालय की अनुमति से विदेशों में भी शिक्षण का कार्य किया। मैनचेस्टर और ऑक्सफोर्ड में तुलनात्मक धर्म के प्रोफेसर, आन्ध्र विश्वविद्यालय के कुलपति, ऑक्सफोर्ड में स्पल्डग प्रोफेसर ऑव ईस्टर्न रिलीजन एण्ड़ एथिक्स के पदों पर भी आपने कार्य किया। आपका इण्डियन फिलासफी का प्रथम भाग 1923 में प्रकाशित हुआ जिसमें वेदों, उपनिषदों, गीता, जैनियों के यथार्थवाद और बुद्ध के आदर्शवाद की मीमांसा है। इसका द्वितीय भाग 1927 में प्रकाशित हुआ जिसमें न्याय के छः अंगो, वेदांत, वैष्णव, वैशेषिक, योग, सांख्य, मीमांसा तथा शक्ति और शैव संप्रदायों का विवरण प्रस्तुत किया।

डा० राधाकृष्णन की एक अन्य पुस्तक **'दि हिन्दू व्यू ऑव लाइफ'** जो उनके मैनचेस्टर कालेज में दिये भाषणों के संग्रह के रूप में थी, बड़ी प्रसिद्व हुई। इसका अनेक देशों और विदेशी भाषाओं में अनुवाद हुआ। इसके उपरान्त 1929 में दो पुस्तकें **ईस्ट एण्ड़ वेस्ट इन रिलीजन** तथा **दि आईडिलिस्ट व्यू ऑफ लाइफ** नामक दो व्याख्यान मालाएं प्रकाशित हुई।
डा० राधाकृष्णन ने हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति का पद 1939 में ग्रहण किया। इसी वर्ष आपकी दो अन्य पुस्तकें ईस्टर्न रिलीजन एण्ड़ वेस्टर्न तथा महात्मा गांधी प्रकाशित हुई। इन प्रसिद्ध पुस्तकों के अतिरिक्त उन्होंने कई अन्य पुस्तकें और व्याख्यान मालायें आदि प्रकाशित की जिनमें दि रिलीजन वी नोड तथा दि हार्ट ऑफ हिन्दुस्तान एण्ड़ कल्चर विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

शिक्षा के क्षेत्र के अतिरिक्त इनको अनेक महत्वपूर्ण पदों का भार दिया गया था–

- सन् 1931 में वह अन्तर्राष्ट्रीय सहभागिता के सदस्य नियुक्त हुए थे। इस पद पर उन्होंने सन् 1939 तक कार्य किया था। इसी बीच में भारत की और से संयुक्त राष्ट्र संघ की शिक्षा सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिषद में एक शिष्ट मंड़ल गया था, डा० राधाकृष्णन उसके साथ अध्यक्ष के रूप में गये थे।
- सन् 1948 में वह यूनेस्को की कार्यकारिणी समिति के अध्यक्ष निर्वाचित हुए थे।
- सन् 1948 में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग के अध्यक्ष के पद पर नियुक्त हुए।
- वह देश की विधानसभा के सदस्य थे।
- वह बंगाल की रायल एथिलिटिक सोसाइटी के सामान्य सदस्य थे।
- 1949 में वह भारत के राजदूत के रूप में रूस गये थे। स्टैलिन ने स्वयं दो बार इनका स्वागत किया था।
- सन् 1952 में वह सर्वसम्मति से भारत के उपराष्ट्रपति नियुक्त हुए।
- 3 जून, 1953 को हावर्ड विश्वविद्यालय ने आपको डाक्टर आफ लॉ की उपाधि से विभूषित किया। डॉ० राधाकृष्णन को देश में और विदेशों में अनेकों बार तथा विभिन्न शिक्षा संस्थाओं द्वारा इस प्रकार की सम्मानीय उपाधियों द्वारा विभूषित किया गया था।
  इस प्रकार डा० राधाकृष्णन वह व्यक्ति है जिसकी दार्शनिक प्लेटो ने कभी कल्पना की थी। उनके अन्दर कुछ ऐसे गुण थे जो बिरले महापुरूषों में ही पाये जाते हैं। यद्यपि वह इतने उच्च पद पर प्रतिष्ठित थे, तथापि प्रत्येक व्यक्ति उनसे बिल्कुल आसानी से मिल सकता था। उनका हृदय बहुत उदार था, मानवता की वह सजीव प्रतिमा थे। भारतीय संस्कृति में जो कुछ श्रेष्ठ है उसके वह ज्वलंत उदाहरण थे। देश को उनके ऊपर गर्व हैं।

डा० राधाकृष्णन के महत्वपूर्ण कार्य–

राजनैतिक कार्य–

भारत को आधुनिक रूप प्रदान करने में डा० राधाकृष्णन का महत्वपूर्ण योगदान है। स्वतन्त्रता पूर्व भारतीय जनमानस में चेतना जगाने का कार्य डा० राधाकृष्णन ने बखूबी निभाया। उन्होंने भारतीयों को शिक्षित करने का बेड़ा उठाया ताकि अंग्रेज साम्राज्य के अत्याचार एवं कठोर नियंत्रण की बेडियाँ उतारकर स्वतन्त्र भारत का निर्माण किया जा सके। डा० राधाकृष्णन ने विभिन्न वर्गो के लोगो को संगठित कर छोटी-छोटी टोलियां बनाई जिनका उद्देश्य अहिंसात्मक ढंग से अंग्रेजी साम्राज्य का विरोध करना था। वे स्वतन्त्रता पूर्व विधायिका में चुने गये। उन्होंने भारत के साथ-साथ विश्व पटल पर भारतीय पहलुओं को रखा।

डा० राधाकृष्णन को भारत के प्रथम उपराष्ट्रपति बनने का सौभाग्य दो बार मिला। प्रथम बार 1952 से 1957 तक तथा द्वितीय बार 1957 से 1962 तक। स्वतन्त्र भारत की उथल-पुथल से भरी राजनीति को उन्होंने आदर्शात्मक रूप दिया। द्वितीय राष्ट्रपति के रूप में उनका कार्यकाल 1962 से 1967 के मध्य रहा। इस काल में भारत को जहाँ राष्ट्रमण्ड़ल में अपना स्थान प्राप्त हुआ। वहीं चीन जैसे राष्ट्रो से सीमा विवाद के कारण युद्व की विभीषिका सहनी पड़ी। इस कठिन समय में अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन करते हुए उन्होंने भारतीय राष्ट्रीयता एवं अखण्ड़ता को अक्षुण्ण बनाये रखा। डा० राधाकृष्णन भारत के राजदूत के रूप में चीन, अमेरिका, इंग्लैण्ड तथा अन्य देशों में गये। वहाँ उन्होंने भारतीय राजनीति को अपनी कुशल वैदेशिक नीति द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय रूप प्रदान किया। उनके काल में राजनैतिक सम्बन्धों के साथ-साथ सांस्कृतिक सम्बन्धों में भी प्रगाढ़ता आयी। डा० राधाकृष्णन भारतीय राजनीति में नीति और नैतिकता के समावेश के समर्थक थे। उनका यह विचार था कि जब तक राजनीति में नीति का समावेश नहीं होगा तब तक विश्व का कल्याण नहीं हो सकता है। उनके राजनैतिक कार्य ठोस एवं जनोपयोगी थे। हावर्ड विश्व-विद्यालय के अध्यक्ष ने उन्हें डा० आफ लॉ के उपाधि देते हुए ठीक कहा था कि 'आज विश्व में कोई भी विचारक एवं दार्शनिक ऐसा नही है जो भारतीय एवं पाश्चात्य धर्मो, विचारधाराओं के विभिन्नत्व में आप से अधिक एकल दर्शन करता हो।'

आज संसार के प्रायः समस्त देश विनाश की ओर द्रुतगति से अग्रसर हैं इस गति को देखकर प्रतीत होता है कि समस्त देश प्रायः दो विरोधी भागों में विभक्त हो गये हैं। एक तरफ शान्ति के पक्षधर देश जो आधुनिक हथियारों की होड़ और मानवता की हत्या के विरूद्ध शान्ति के पुजारी के रूप में अपने आपको स्थापित करने का प्रयास कर रहे हैं। वहीं दूसरी ओर ऐसे देश है जो आतंकवाद, देश विरोधी गतिविधियों को चलाकर देशों की राजनैतिक, आर्थिक एवं सामाजिक व्यवस्था में उथल-पुथल मचा देते हैं। इन लोगों का उद्देश्य स्वयं स्वार्थ की सिद्धि है। डा० राधाकृष्णन ने इसीलिये सभी देशों के लिए एक अत्यन्त अन्तर्राष्ट्रीय कानून बनाने एवं न्यायालय की स्थापना का पुरजोर समर्थन किया है।

सामाजिक कार्य-

सामाजिक असमानता भारत में प्राचीनकाल से ही अपने पांव पसारे हुए है। वर्ण व्यवस्था के अनुसार समाज को चार भागो में बाँटा गया है- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। सभी के कर्मो का निर्धारण उनकी जाति के अनुसार था। इसका कारण एक दूसरे से लोग जुड़े होते हुए भी विचारों में असमानता थी जिससे भेद-भाव और दुराव की भावना उत्पन्न हो जाती थी। शूद्रो को वेद पढ़ने का अधिकार नहीं था। उन्हें अछूत समझा जाता था। उनके लिए सार्वजनिक स्थलों पर जाना निषेध था। इन सब सामाजिक असमानताओं को दूर करने का डा० राधाकृष्णन ने सफल प्रयास किया। उन्होंने शूद्रों को वेद पढ़ने का अधिकार दिलाने के लिए और सार्वजनिक स्थलों पर जाने के लिए प्राचीन कुरीतियों को समाप्त किया। गांधी के समान डा० राधाकृष्णन भी मानते हैं कि हरिजन ईश्वर की सन्तान है। उन्हें भी सभी प्रकार के अधिकार प्राप्त हैं। समाज में सभी व्यक्ति समान रूप से रहें, इसके लिए उन्होंने दलित कल्याण वर्ग पुर्नजागरण समितियों की स्थापना की। साथ ही साथ उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से सामाजिक कुरीतियों, रूढ़ियों, अन्धविश्वासों, भेदभावों और विभेदीकरण की नीति का कड़ा विरोध किया।

डा० राधाकृष्णन छुआछूत को हिन्दू जाति को सबसे बडा कलंक मानते हैं और इसका नाश अविलम्ब चाहते हैं। वे चाहते हैं कि सभी हिन्दुओं का एक ही ढंग से यज्ञोपवीत हो और प्रत्येक स्त्री, पुरूष को गायत्री मन्त्र की शिक्षा बिना भेदभाव के मिलनी चाहिए। ब्राह्मण के बारे में उनका कहना है कि यह पद (ब्राह्मणत्व) योग्यता और प्रवशत्ति के अनुसार दिया जाना चाहिए, जाति में जन्म लेने के आधार पर नहीं।

स्त्रियों की स्थिति स्वतन्त्रता के पूर्व बहुत ही निराशाजनक थी। उन पर अनेक प्रकार के प्रतिबन्ध थे। राधाकृष्णन के अनुसार एक स्त्री ही समाज को संगठित एवं उच्चतम स्तर पर पहुँचा सकती है। स्त्रियाँ शिक्षित होंगी तो देश शिक्षित होगा। यदि एक मनुष्य शिक्षित होता है लेकिन अगर एक स्त्री शिक्षित होती है तो एक परिवार शिक्षित होता है। स्त्रियों को घर की चाहरदीवारी से निकलकर स्कूल के प्रांगण में पहुँचाने के लिए उन्होंने महिला उत्थान आन्दोलन चलाया जिससे वे राष्ट्र निर्माण में अपनी भूमिका निभा सकें। उन्होंने स्त्रियों के लिए निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा को संविधान के मूल अधिकार में प्रस्तावित किया।

डा० राधाकृष्णन ने विवाह की चर्चा की है और कहा है कि समय और परिस्थिति के अनुसार इसके नियमों में आवश्यक परिवर्तन होना चाहिए। वे विधवा विवाह तथा तलाक का समर्थन करते हैं और बाल विवाह का विरोध। इसके प्रमाण में वे वैदिक काल की प्रथाओं का उल्लेख करते हैं और कहते हैं कि उस काल में प्रौढ़ और विधवा विवाह होते थे और जो स्त्री या पुरूष स्वेच्छा से ब्रह्मचर्य रखना चाहते थे उन्हें पूरी स्वतन्त्रता थी।

संविधान में मूल अधिकारों की चर्चा की गई है जिसमें सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े व्यक्तियों को कुछ विशेष अधिकार दिये गये। स्वतन्त्रता के बाद के समय में डा० राधाकृष्णन ने इन मूल अधिकारों को पालन करवाने के लिए विभिन्न आयोगों की स्थापना की जिससे सामाजिक असमानतायें दूर हों एवं पिछड़े लोगों को प्रशासनिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में अगड़ों के समान अधिकार दिये जायें तथा उन्हें राष्ट्र के निर्माण में समान महत्व दिया जाए।

धार्मिक कार्य-

आधुनिक युग में श्री अरविन्द के समान डा० राधाकृष्णन भी भारतीय संस्कृति के व्याख्याता माने जाते हैं। डा० राधाकृष्णन ने अपने दर्शन में धर्म के महत्व का समर्थन किया। उनके अनुसार संसार के सभी आधुनिक संकट धर्महीनता के कारण है। पश्चिम के अनुकरण में हम धर्म को भूल गए हैं। एक ओर मनुष्य धर्म के विरूद्ध होते जा रहे हैं तो दूसरी ओर जो धार्मिक हैं उनमें से अधिकतर धार्मिक कर्मकाण्ड़ और संस्थाओं में फंसे हुए हैं। डा० राधाकृष्णन आध्यात्मिक धर्म के समर्थक हैं। उनके अनुसार धर्म का सम्बन्ध हमारे आन्तरिक जीवन से हैं। धर्म वह साधन है जो हमारे अन्तःकरण का स्पर्श करता है, पाप से संघर्ष करने में हमारी सहायता करता है। हमें नैतिक बल प्रदान करता है और संसार की सुरक्षा करने के लिए अपेक्षित साहस प्रादन करता है।

अपनी पुस्तक **'ईस्ट एण्ड़ वेस्ट रिलीजन'** में डा० राधाकृष्णन ने कहा है कि न्याय करना, दया करना और पारस्परिक प्रेम सम्बन्ध स्थापित करने के लिए धर्म प्रयत्नशील रहता है। डा० राधाकृष्णन धर्म को मानसिक एवं बौद्धिक स्तर पर निवास करने वाली कोई अलौकिक एवं गुप्त वस्तु न मानकर जीवन में व्यवहृत होने वाली वस्तु मानते हैं। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया है कि धर्म न तो एकन्तिक साधना के फलस्वरूप प्राप्त होने वाली व्यक्तिगत सम्पत्ति हैं और न सरकार के द्वारा लादा जाने वाला कोई कानून है। यह वह वस्तु है जो युक्तिसंगत ज्ञान एवं अनुभवशीलता के द्वारा उत्पन्न होती है।

डा० राधाकृष्णन सच्चे हिन्दू थे। उन्होंने हिन्दू धर्म को विश्व धर्म बनाने का प्रयास किया। उस समय अंग्रेजी शासन व्यवस्था थी और उनके द्वारा स्थापित स्कूलों में ईसाई धर्म की महानता और हिन्दू धर्म की आलोचना की जाती थी। अंग्रेजी मिशनरियों का उद्देश्य अंग्रेजी का प्रचार करना और ईसाई धर्म में लोगों को दीक्षित करना था।

डा० राधाकृष्णन ने ईसाई स्कूल में शिक्षा पाई थी। यहाँ पर हुई हिन्दू धर्म की आलोचनाओं ने उन्हें हिन्दूत्व के प्रति प्रेरित किया। डा० राधाकृष्णन इतिहास का उदाहरण देते हुए कहते हैं कि हिन्दू धर्म में प्राचीन काल से ही सहिष्णुता की भावना रही है। इसमें विश्व के सभी धर्मो को समान महत्व दिया गया है। डा० राधाकृष्णन के अनुसार हिन्दू धर्म में विश्व धर्म बनने की क्षमता है। उनके अनुसार हिन्दू धर्म उन सभी का मात्र मण्ड़ल है जो सबके नियमों को मानते है और निष्ठा पूर्वक सत्य की खोज करते हैं।

डा० राधाकृष्णन आयोग–

स्वतन्त्रता के पश्चात सरकार ने उच्च शिक्षा के विकास के लिये अर्न्तविश्वविद्यालय शिक्षा परिषद और केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड की सिफारिश को स्वीकार करते हुए 4 नवम्बर, 1948 को डा० राधाकृष्णन की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग की नियुक्ति की। अध्यक्ष के नाम पर इस आयोग को राधाकृष्णन आयोग भी कहा जाता है। इस आयोग की नियुक्ति का उद्देश्य भारतीय विश्वविद्यालय शिक्षा पर रिपोर्ट प्रस्तुत करना था और उन सुधारों एवं विस्तारों के बारे में सुझाव देना जो देश की वर्तमान और भावी आवश्यकताओं के लिए उपयुक्त हो।

आयोग का कार्यक्षेत्र–

1- भारत में विश्वविद्यालय शिक्षा और अनुसन्धान के उद्देश्य।
2- भारतीय विश्वविद्यालयों के संगठन, नियन्त्रण, कार्य और क्षेत्राधिकार के बारे में आवश्यक और वांछनीय परिवर्तन एवं केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारों से उनके सम्बन्ध।
3- विश्वविद्यालयों की आर्थिक दशा।
4- विश्वविद्यालयों में शिक्षण और परीक्षा का उच्चतम स्तर बनाये रखना।
5- विश्वविद्यालयों में मानवशास्त्र और विज्ञान एवं शुद्ध विज्ञान और प्रोद्योगिक प्रशिक्षण के पाठ्यक्रमों में उचित सामन्जस्य स्थापित करना और इन पाठ्यक्रमों की अवधि को निश्चित करना।
6- विश्वविद्यालयों में शिक्षा का माध्यम।
7- भारतीय संस्कृति, इतिहास, साहित्य, भाषा, दर्शन और ललित कलाओं में उच्च अध्ययन की व्यवस्था।
8- प्रादेशिक या अन्य आधार पर अधिक विश्वविद्यालयों की आवश्यकता।
9- विश्वविद्यालयों और उच्चतर अनुसन्धान संस्थाओं में ज्ञान की सब शाखाओं में उच्च अनुसन्धान की व्यवस्था।
10-ट्यूटोरियल कार्य की व्यवस्था।
11-बनारस, अलीगढ़ और दिल्ली विश्वविद्यालयों तथा अखिल भारतीय स्तर की दूसरी शिक्षा संस्थाओं की विशेष समस्यायें।

इस प्रकार आयोग को भारत में विश्वविद्यालय शिक्षा के सभी पहलुओं का अध्ययन करने, उनके दोषों को बताने और उनके सुधार के लिए सुझाव देने को कहा गया। इसके साथ ही उसे वर्तमान राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था को ध्यान में रखते हुए विश्वविद्यालय शिक्षा के उद्देश्यों का पुर्नमूल्यांकन करना था।

आयोग की सिफारिशें एवं सुझाव–

आयोग ने विश्वविद्यालय शिक्षा के सभी अंगों के बारे में अपने विचार व्यक्त किये और उनमें सुधार करने के लिए सुझाव भी दिये। इस सम्बन्ध में आयोग ने लिखा है– 'हमारी सिफारिशें उन महत्वपूर्ण प्रमाणों और रचनात्मक सुझावों पर आधारित है जो हमको मिले हैं। हमने विश्वविद्यालयों के पुरूषों और स्त्रियों की आशाओं और आकांक्षाओं की व्याख्या करने का प्रयास किया है एवं उनकी अभिलाषाओं और आदर्शो को निश्चित भप देने का प्रयत्न किया गया है।'

आयोग ने विश्वविद्यालय शिक्षा के उद्देश्य निर्धारित करते हुए बताया कि हमारी शिक्षा पद्धति को अपने प्रमुख सिद्धान्तों को उस सामाजिक व्यवस्था में खोजना चाहिए जिसके लिये वो तैयार करती है। भारतीय संविधान में सामाजिक व्यवस्था का उल्लेख निम्न शब्दों में किया गया है– 'हम भारत के लोग भारत को प्रभुत्व सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकोंकी सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता, प्रतिष्ठा तथा अवसर की समता प्राप्त करने के लिए तथा उन सबमें व्यक्ति की गरिमा तथा राष्ट्र की एकता सुनिश्चित कराने वाली बन्धुता के हेतु दृढ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में एतद् द्वारा संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।''

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक स्थितियों में बहुत परिवर्तन हो चुका है। इसलिए विश्वविद्यालयों के उत्तरदायित्व बढ़ गये हैं। उन्हें ऐसे व्यक्तियों का निर्माण करना चाहिए जो दूरदर्शी, बुद्धिमान और साहसी हो। विश्वविद्यालय शिक्षा का उद्देश्य है, ऐसे व्यक्तियों का निर्माण जो प्रजातंत्र को सफल बनाने में अपना योगदान दे सके और मानव जीवन का अर्थ व सार समझ सकें।

छात्रों का आध्यात्मिक विकास करना, विश्व धर्म की भावना, सहिष्णुता की भावना, राष्ट्रीयता की भावना छात्रों में उत्पन्न करना विश्वविद्यालय शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए। विश्वविद्यालयों को छात्रों को न केवल मानसिक वरन शारीरिक विकास के प्रति भी ज्ञान देना चाहिए। विश्वविद्यालय शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को जीवन की कला जानने का ज्ञान देना होना चाहिए जिससे छात्रों को बौद्धिक दूरदर्शिता, सौन्दर्यात्मक अनुभूति और प्रयोगात्मक शक्ति प्राप्त हो। विश्वविद्यालय छात्रों के चरित्र निर्माण में प्रमुख भूमिका निभा सकते हैं। विश्वविद्यालय का महत्वपूर्ण कार्य राष्ट्रीय अनुशासन की स्थापना करना होना चाहिए। विश्वविद्यालय विश्व शान्ति में महान योगदान दे सकते हैं। अतः विश्वविद्यालयों को अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना के विकास के लिए कार्य करना चाहिए।

अध्यापक का महत्व एवं उत्तरदायित्व बहुत अधिक हैं। अतः अध्यापकों को अपने छात्रों के प्रति ईमानदारी और निष्ठापूर्वक कर्त्तव्यों का साथ-साथ आदर्श और परम्पराओं का वाहक होता है जो समाज को उन्नत रूप प्रदान कर सकता है। छात्र शिक्षक सम्बन्धों में दुराव न होकर निकटता होनी चाहिए और व्यक्तिगत सम्पर्क को बढ़ावा देना चाहिए। चूँकि अध्यापक की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। अतः उनके वेतन एवं स्थितियों में समय-समय पर बदलाव लाने चाहिए।

पाठ्यक्रम का निर्माण इस प्रकार हो कि माध्यमिक से विश्वविद्यालय तक की शिक्षा में एक क्रमबद्धता हो। छात्रों को हमेशा प्रयोगों के माध्यम से नवीन खोजों एवं नवीन शोधों की जानकारी प्रदान करनी चाहिए। विषयों का चुनाव इस प्रकार किया जाना चाहिए जो छात्रों की रूचि के अनुसार हो। आयोग ने पाठ्यक्रम के तीन लक्ष्य बताये हैं- सामान्य शिक्षा देना, उदार शिक्षा देना और व्यावसायिक शिक्षा देना।
शिक्षा का माध्यम उनकी निज भाषा में होना चाहिए ताकि उन्हें शिक्षा प्राप्त करने में कठिनाई न हो। विश्वविद्यालय स्तर में मातृ-भाषा के साथ-साथ एक पाश्चात्य भाषा की भी शिक्षा दी जानी चाहिए। छात्र छात्राओं के कल्याण हेतु विश्वविद्यालय को अपने स्तर पर प्रयास करना चाहिए। योग्य छात्रों के लिये विशेष प्रोत्साहन और अयोग्य छात्रों के लिए विशेष शिक्षा का प्रावधान होना चाहिए। छात्रों का समय-समय पर स्वास्थ्य परीक्षण और मानसिक परीक्षण होना चाहिए।

भारत एक कृषि प्रधान विकासशील देश है जहाँ पर बेरोजगारी सुरसा की तरह मुँह बाये खड़ी है। छात्र उच्च से उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद भी रोजगार प्राप्त नहीं कर पा रहा है। डिग्रीयाँ मात्र कागजों में सीमित होकर रह गई है न उनका कोई सामाजिक महत्व है और न राष्ट्रीय स्तर पर। मात्र डिग्रीयाँ ले लेने से व्यक्ति राष्ट्र निर्माण में अपना सहयोग नहीं दे सकता है। अतः आयोग ने व्यावसायिक शिक्षा को महत्वपूर्ण बताया और व्यावसायिक पाठ्यक्रम चलाने का सुझाव दिया। आयोग के अनुसार व्यावसायिक शिक्षा वह प्रक्रिया है जो मनुष्यों और स्त्रियों को व्यावसायिक भावना से परिश्रमपूर्ण और उत्तरदायी कार्य के लिए तैयार करती है। आयोग ने व्यावसायिक शिक्षा के लिए निम्नलिखित विषयों का चुनाव किया-कृषि, वाणिज्य, शिक्षण, इंजीनियरिंग एवं टैक्नालॉजी, कानून, चिकित्सा, औद्योगिक शिक्षा आदि।

स्त्री शिक्षा के महत्व पर बल देते हुए आयोग ने लिखा है कि शिक्षित स्त्रियों के बिना शिक्षित व्यक्ति नही हो सकते। यदि सामान्य शिक्षा को पुरूषों या स्त्रियों तक सीमित रखा जाता है तो स्त्रियों को भी शिक्षा प्राप्त करने का अवसर दिया जाना चाहिए क्योंकि ऐसी दशा में शिक्षा को निश्चित रूप से अन्य पीढ़ी को हस्तांतरित किया जायेगा। स्त्रियों को ऐसी शिक्षा दी जाए जिससे वो सुमाता और सुग्रहिणी बनें। स्त्री विश्वविद्यालयों की स्थापना की जाए तथा साथ ही साथ ऐसी शिक्षा प्रदान की जाये जिससे वे समाज में अपना योगदान दे सकें।

इसके अतिरिक्त परीक्षा पद्धति, विश्वविद्यालयों का संगठन, वित्त व्यवस्था, धार्मिक शिक्षा ग्रामीण विश्वविद्यालय की स्थापना आदि के विषय में आयोग ने अपने सुझाव दिये हैं। राधाकृष्णन आयोग ने विश्वविद्यालय शिक्षा के सभी अंगो का विस्तारपूर्वक विवेचन किया और उनके सम्बन्ध में अपने सुझाव दिये। इनको सर्वसम्मति से अद्वितीय माना गया। कुछ विचारकों ने आयोग पर आरोप लगाया है कि उसने स्त्री शिक्षा के बारे में उत्तम सिफारिशें नहीं की और धार्मिक शिक्षा को महत्वपूर्ण स्थान नहीं दिया जबकि ऐसा आक्षेप निराधार है। राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद ने आयोग के कार्यो की प्रशंसा करते हुए कहा कि आयोग ने हमारी विश्वविद्यालय शिक्षा की प्राप्तियों पर अत्यन्त गम्भीरतापूर्वक विचार करके एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रतिवेदन प्रस्तुत किया है और अत्यन्त मूल्यवान प्रस्ताव तथा सुझाव भी दिये हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1- डा० एन० के० देवराज भारतीय दर्शन

2- डा० राधाकृष्णन भारतीय दर्शन।

3- डा० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी डा० राधाकृष्णन-एक जीवनी।

4- डा० सरयू प्रसाद चौबे भारतीय शिक्षा दार्शनिक।

5- डा० वैद्यनाथ प्रसाद वर्मा विश्व के महान शिक्षा शास्त्री।

6- के० जी० सैयदेन भारतीय शिक्षा दर्शन।

7- मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ भारतीय शैक्षणिक विचारधारा।

8- के० जी० सैयदेन आधुनिक भारतीय शिक्षा और उनकी समस्यायें।